हिन्दुस्तानी भाषा साहित्य समीक्षा सम्मान-2015

शब्द गाथा

(समीक्षा संग्रह)

सुधाकर पाठक के कविता संग्रह

ज़िन्दगी ...कुछ यूँ ही

का

समीक्षात्मक अनुशीलन

शब्द गाथा

(समीक्षा संग्रह)

शब्द गाथा

(समीक्षा संग्रह)

सुधाकर पाठक के कविता संग्रह

ज़िन्दगी ...कुछ यूँ ही

का

समीक्षात्मक अनुशीलन

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित संस्था)

प्रकाशक :

हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

(भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और संवर्धन को समर्पित संस्था)

पंजीकृत कार्यालय :
3675, राजापार्क, रानीबाग, दिल्ली-110034
दूरभाष : 09873556781, 09968097816, 09868937904
E-mail : hindustanibhashabharti@gmail.com
Website : www.hindustanibhashaakadami.com

Shabd Gatha
by Hindustani Bhasha Akadami
ISBN : 978-81-932721-1-4

© हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

प्रथम संस्करण : 2016
मूल्य : ₹ 200 $ 25

डिजाइनिंग/टाइप सेटिंग : दैव्य ग्राफिक्स (9971567313)

इस प्रकाशन के सर्वाधिकार हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी के पास सुरक्षित हैं और पूर्व अनुमति के बिना प्रकाशन के किसी भी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रोनिकी, मशीनी, फोटो प्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से प्रयोग, पाठ एवं प्रसारण वर्जित है ।

आभार

वाणी प्रकाशन, दिल्ली जिन्होंने मेरे कविता संग्रह 'ज़िन्दगी... कुछ यूँ ही' का प्रकाशन किया ।

श्री अरुण महेश्वरी जिन्होंने इस समीक्षा सम्मान योजना की न केवल रूपरेखा बनाने में सहयोग दिया बल्कि वाणी फाउण्डेशन के माध्यम से पारदर्शी समीक्षा चयन प्रक्रिया से इसे सफल भी बनाया ।

डॉ. हरीश नवल और डॉ. ओम निश्चल जिन्होंने इस योजना पर अपनी सम्मति देकर इस पुस्तक को बहुमूल्य बना दिया ।

अन्त में सभी समीक्षकों का आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने अपनी सहभागिता द्वारा इस योजना को सफल बनाया ।

सुधाकर पाठक
अध्यक्ष
हिन्दुस्तानी भाषा अकादमी

'जिन्दगी...कुछ यूं ही'
समीक्षा का स्वर-सम्मान...

कोई भी रचना, सीमित अथवा असीमित अर्थों में प्रकारांतर से अपने वर्तमान की समीक्षा ही होती है। रचनाकार अपने सृजन में जितना अपने समय को समेट पाता है, उद्घाटित कर पाता है, उतनी ही वह जनता के काम की होती है, बाकी उच्छिष्टवत कूड़े के ढेर पर इकट्ठा होती रहती है। चूंकि साहित्य का प्रथम पक्ष, मानव-सत्ता का पक्ष है, इसलिए किसी भी कृति की समीक्षा से पूर्व एक बड़ा सवाल रचना के साथ जुड़ा होता है, सृजन व्यक्तिगत कार्य है अथवा जन जीवन में उसकी कोई उपयोगिता, सहभागिता होनी चाहिए? जरूरी नहीं कि कोई कृति अपनी अकादमिक प्रवृत्ति के कारण तुरंत जनता की समझ में आ जाए, किंतु अंततः, पूर्णतः होनी चाहिए उसी के निमित्त। रचना की स्वीकार्यता-अस्वीकार्यता की दृष्टि से यही मापदंड समीक्षक का भी हो तो सृजन में उपस्थित कथ्य-अकथ्य, रस-तत्व अपने पूरे औचित्य-अनौचित्य के साथ रेखांकित हो पाते हैं।

साहित्य मानव-सत्ता का पक्ष है, इसलिए कृतियों का कामचलाऊ, ऊपरी अवलोकन व मूल्यांकन निष्कर्षतः अपनी दिशा और जड़ों से कटा-बंटा हो जाता है। भावुकता से दूर रहते हुए रचनाकार में जनता के वांछित प्रतिरोध का स्वर, अपने जनविरोधी वर्तमान से जूझने की बेचैनी परिलक्षित न हो तो मान लेना चाहिए कि समीक्षा से न उसकी सामाजिक उपयोगिता, न साहित्यिक आवश्यकता का कोई सरोकार हो सकता है, न उसके परिष्करण अथवा स्वीकार्यता के बारे में कोई संशय पालना चाहिए। रचना का समय जन के सापेक्ष नहीं तो उसका मुख्य स्वर आक्रोश होगा। यह अलग बात है कि रचनाकार उसे किस दृष्टि से लेता है और अपने शब्दों में अपने समय को कितना एकाकार कर पाता है। मनुष्य के बाकी कामों की तरह कवि-लेखक की भी पहली खोज सुख है। कोरी भावुकता से दूर रहते हुए कवि-लेखक अपने वर्तमान से जूझता है। गलत का प्रतिरोध करते हुए अपने पाठकों को अपने साथ जोड़ता है। अपने समय के आक्रोश को अपने शब्दों से सींच कर हरा-भरा करता है। समय और संबंधों की जांच करता है। वायवी खुशहाली को स्वर देने से बचता है। कृति के सृजन और उसके आत्मविश्लेषण में स्वयं वह पहला समीक्षक भी होता है। उसमें यह प्रक्रिया आद्योपांत चलती रहती है। समीक्षा-दृष्टि में बड़ी रचना वह है, जो मनुष्यता को सुंदर बनाती है। सत्ता उसे ही तो सुनियोजित तरीके से कुरूप बनाने की

कोशिश करती है। इन्हीं स्थितियों को सामने रखते हुए समीक्षा किसी रचना के सुख और चिंता से हमारा साक्षात्कार कराती है।

उसकी पहली चुनौती अपने समय की समीक्षा होती है। एक बार फिर सच रचनाकार को अपने साथ चलने के लिए विवश करता है कि साहित्य का प्राथमिक सरोकार अपने समय के हाशिये पर पड़े वंचित समाज के इर्द-गिर्द होना चाहिए। तभी उसकी कृति समय का आईना होगी। उसे अपने सृजन में वह सब करना पड़ता है, जिससे समाज के रहने लायक होने की सोच और व्यवस्था को स्वर मिले। ताकि जिस संस्कृति का उसकी रचना में विरोध हो, वह उसके समय पर हावी न हो। रचनाकार को वर्तमान समय में यह भी ध्यान रखना होगा कि मीडिया सत्ता का पक्ष हो चुका है एवं सत्ता को प्रसन्न करने में लगा है। सत्ता खौफ और भय पैदा करती है। मीडिया उसे निर्भय रहने के लिए आश्वस्त करता है। ऐसे में समीक्षा की दृष्टि से रचना की पक्षधरता सत्ता, खौफ, भय और उसे आश्वस्त, संपोषित करने वाली शक्तियों के भी विरुद्ध होनी चाहिए। साहित्य की भूमिका प्रतिपक्षी, विरोधी है। वह हमें निर्भीक बनाता है। सत्य और न्याय के रास्ते पर चलने के लिए प्रेरित करता है। ये सूत्रवाक्य लेखक और समीक्षक दोनो के लिए एक समान होते हैं।

कविता संकलन 'जिंदगी....कुछ यूं ही' जब वाणी प्रकाशन से पाठकों तक पहुंचा तो वाणी फाउंडेशन और हिंदुस्तानी भाषा अकादमी की प्राथमिकता में कृति का समीक्षा-पक्ष भी रहा। निश्चय हुआ कि इस कृति के समीक्षक न केवल सम्मानित किए जाने चाहिए बल्कि उनकी समीक्षाओं का संकलन एक पुस्तक के रूप में भी प्रकाशित होना चाहिए। यह एक नए तरह का प्रयोग था। समर्थ साहित्यकारों की समिति ने प्राप्त समीक्षा-सामग्री पर अपनी दृष्टि एवं विचार दिए। तदनंतर वर्ष 2015 के लिए प्रथम 'हिंदुस्तानी भाषा साहित्य समीक्षा-सम्मान' दमोह, मध्य प्रदेश के लेखक-पत्रकार नरेंद्र दुबे को देने का निर्णय लिया गया और समीक्षाओं को एक पुस्तक के रूप में 'शब्द गाथा' के नाम से प्रकाशित करने का भी निर्णय किया गया । हिंदुस्तानी भाषा अकादमी ने आगे भी प्रकाशित होने वाली कृतियों की समीक्षाओं पर इसी तरह के पुरस्कार देने का निश्चय किया है, ताकि नव रचनाकारों के साथ ही नये समीक्षकों को भी प्रोत्साहित किया जा सके।

* * ✻ * *

विवेक और प्रज्ञा की पहचान कराता निष्पक्ष पारदर्शी समीक्षा संग्रह

समीक्षा के संदर्भ कर्म को साहित्य की दुनिया में उतना ऊँचा स्थान नहीं मिला जितने की वह अधिकारिणी है । समीक्षा रचनाकार को चेताती है और बोध कराती है कि उसकी दिशा का स्वरूप कैसा है । समीक्षक का कार्य दायित्व मूल रचनाकार से न्यून नहीं बल्कि प्रायः अधिक होता है । समीक्षक को परकाया प्रवेश कर रचनाकार के भीतर को जानना होता है । विषय, कथ्य, शिल्प, शैली, भाषा, विचार और उद्देश्य आदि को परखना होता है– यह विशिष्ट कर्म है । निष्पक्ष पारदर्शी समीक्षा विवेक और प्रज्ञा की पहचान कराती है । कई बार स्वयं रचनाकार अपने लिखे को उतना नहीं जानता जितना समीक्षक उसे जान पाता है यानी समीक्षा में कुछ यूँ ही नहीं चलता है या कहें, नहीं चलना चाहिए ।

प्रिय प्रतिभ कवि सुधाकर पाठक के कविता संकलन 'ज़िन्दगी... कुछ यूँ ही' ने अनेक विद्वानों साहित्यकारों और साहित्य प्रेमियों को प्रेरित किया कि वे इस पर अपनी प्रतिक्रियाएँ दें । यह गौरव हर कवि को नहीं मिल पाता ...दरअसल सुधाकर पाठक की संकलित कविताएँ प्रत्यक्षतः जीवन से जुड़ी हुई हैं । उनकी कविताओं में पाठक स्वयं को देखता है अथवा ढूंढता है, कविता सच्ची और अनायास उद्भाषित हो तब कच्चा शिल्प भी पका सा लगता है । इस संकलन की लगभग सभी कविताएँ ऐसी ही सच्ची और भली सी हैं जैसे कि स्वयं सुधाकर हैं वे अपनी कविताओं से कहीं भी दूर नहीं हैं तभी उनकी कविताएँ मेरी, आपकी और उनकी दृष्टि में अपनी या अपनी सी लगती है तभी प्रतिक्रिया व्यक्त करने की भावना बलवती होती है ।